# आधुनिक मीडिया शिक्षण :
# बाज़ार और सरोकार के बीच एक पाठ्यक्रम

जिस तरह बीसवीं सदी पूरी दुनियाँ में विज्ञान, सूचना, संचार और मीडिया के विस्फोट की सदी मानी गई है उसी तरह यह आधुनिक मीडिया शिक्षण की सदी भी है। अमेरिका, कनाडा और पश्चिमी योरोप के देशों में पत्रकारिता की विधा तो मौजूद थी लेकिन उसकी औपचारिक शिक्षा का इतिहास जोसेफ पुलित्जर के प्रयासों से बीसवीं सदी के पहले दशक में ही शुरू हुआ था। भारत में गुरु-शिष्य परम्परा प्रत्येक अनुशासन की शिक्षा की मान्य विधा थी। उसमें लक्ष्य तक पहुँचने का मार्ग कठोर परिश्रम, सकारात्मक दृष्टि और स्थापित नैतिक आदर्शों से होकर गुजरता था। उस दौर में स्नातक की डिग्री होना पत्रकारिता में प्रवेश की अनिवार्य शर्त नहीं थी। विचार और कलम की सृजनात्मक शक्ति कम्प्यूटर की भाषा में रूपान्तरित नहीं हुई थी। नए पत्रकारों का प्रशिक्षण संपादक और उसके सहयोगियों की टेबल के इर्दगिर्द होता था। अभिव्यक्ति की धार, भाषा के संस्कार और अखबार से प्यार सीखने के लिए कोई अतिरिक्त वेतन या प्रोत्साहन भत्ता नहीं मिलता था। रात रात जागकर अच्छा अखबार निकालने की स्पर्धा का जुनून वरिष्ठ सहयोगियों के आचरण और मार्गदर्शन से ही मिलता था। समाचार पत्र से कारपोरेट बन गए लोग आज भले ही अपने अतीत से इन्कार कर दें लेकिन ये भीमकाय भाषाई अखबार समूह भी सम्पादकों, संचालकों और उनके सहयोगियों की इसी साधना से खड़े किए गए हैं। भारतीय भाषाओं की पत्रकारिता की विश्वसनीयता और आत्मनिर्भरता का यह स्वर्णिम काल था।

प्रथम प्रेस आयोग ने अपनी सिफारिश में प्रेस परिषद की स्थापना का सुझाव देते हुए उसी को पत्रकारों के प्रशिक्षण का उत्तरदायित्व सौंपा था। प्रथम प्रेस परिषद के प्रथम अध्यक्ष न्यायमूर्ति जे.आर. मुधोलकर ने इस काम के लिए तीन सदस्यीय समिति भी गठित की थी। 1965 में भारतीय जनसंचार संस्थान की स्थापना को एक महत्वपूर्ण सरकारी पहल के रूप में देखा गया था लेकिन उसकी भूमिका सरकारी सेवा के कुछ अधिकारियों को प्रशिक्षित करने तक सीमित थी। द्वितीय प्रेस आयोग ने पत्रकारों के प्रशिक्षण के लिए एक राष्ट्रीय परिषद की स्थापना का सुझाव तो दिया था लेकिन प्रेस परिषद को उसकी निगरानी की जिम्मेदारी सौंपने के सवाल पर उसकी चुप्पी उपेक्षा भरी थी। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा केवल कुछ केन्द्रीय विश्वविद्यालयों में पत्रकारिता प्रशिक्षण विभाग की स्थापना के लिए अनुदान स्वीकृत करने के अतिरिक्त उसका रवैया आज भी उत्साहवर्धक नहीं है। नवम्बर 1991 में सरकारी प्रेस इन्फरमेशन ब्यूरो ने अपनी पहल पर वरिष्ठ सम्पादकों, पत्रकारों तथा जनसंचार विशेषज्ञों के सम्मेलन में पत्रकारों के प्रशिक्षण तथा पत्रकारिता पाठ्यक्रमों के मानकीकरण को लेकर गंभीर विमर्श किया था लेकिन एक उच्च स्तरीय परिषद के गठन के प्रस्ताव को मूर्त रूप देने में कोई ठोस प्रगति नहीं हो सकी। सबसे ताजा प्रयास वर्तमान प्रेस परिषद के अध्यक्ष न्यायमूर्ति जी.एन. रे और माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय की संयुक्त पहल पर 2008 से शुरू हुआ है।

आधुनिक मीडिया में अत्याधुनिक तकनीक और व्यावसायिकता का दबाव निरन्तर बढ़ रहा है। पिछले दो दशकों की इलेक्ट्रॉनिक मीडिया बाज़ार की माँग का वास्ता देकर देश के सामने जो कुछ परोस रही है उसका नकारात्मक प्रभाव सरकार और पूरे बौद्धिक समाज की चिन्ता बढ़ा रही है। एक ओर मीडिया शिक्षा के प्रति छात्रों का बढ़ता आकर्षण और दूसरी ओर शिक्षकों, पाठ्यपुस्तकों, तकनीकी संसाधनों और व्यावहारिक प्रशिक्षण के अभाव ने मीडिया शिक्षा को अधकचरा और अपूर्ण बना दिया है। प्रमुख समाचार पत्र और चैनल भी अपनी शिक्षण संस्थाएँ शुरू करके धन कमाने की बहती गंगा में हाथ साफ कर रहे हैं। सरकारी या गैर सरकारी स्तर पर मीडिया शिक्षा के लिए हुए गंभीर प्रयासों में मीडिया उद्योग ने असहयोग का रुख अपनाया है। उन्हें शायद यह भी भय सताता है कि प्रशिक्षित होते ही पत्रकार अपनी बेरोजगारी भूलकर अपने अधिकारों को याद करने लगते हैं।

व्यावसायिकता और बाज़ार के प्रचंड दबाव के बावजूद मीडिया शिक्षा का बढ़ता महत्व निर्विवाद है। राजनीति और बाज़ार के अन्तर्सम्बन्धों और पूँजी की सत्ता ने पूरे वैश्विक परिवेश को समेट लिया है। मीडिया और मीडिया शिक्षा के जागरूक लोगों को इन्हीं दबावों के बीच जीवित रहने का रास्ता तलाशना है। सहयोग की सीमा और विरोध की मर्यादा तय करनी है। मीडिया में अपना भविष्य तलाशती पीढ़ी को एक ऐसे पाठ्यक्रम की आवश्यकता है जो उनकी जीविका और जिजीविषा दोनों को जीवित रख सके। इस अंक के अनेक विद्वान लेखकों ने मीडिया शिक्षा के लगभग हर पक्ष को स्पर्श किया है। मुझे विश्वास है कि छात्रों के साथ मीडिया शिक्षा के विद्वान भी इस अंक पर अपनी बेबाक प्रतिक्रिया अवश्य भेजेंगे।

**– अच्युतानंद मिश्र**